Indian Journal of
Social Sciences Research and Analytics

IJSSRA | ISSN: 3107-6238
October-December 2025 | Vol. 01 | Issue 3

डिजिटल उपनिवेशवाद, ज्ञान-औपनिवेशिकता और बौद्धिक स्वराज

प्रोफेसर गोपाल कृष्ण ठाकुर*

*अधिष्ठाता, शिक्षा विद्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र
ईमेल: gkthakur11@gmail.com

DOI: doi.org/10.5281/zenodo.21077110
Accepted on: 30/12/2026 Published on: 10/01/2026

सारांश:

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence–AI) ने ज्ञान-सृजन, शिक्षा, शासन, अर्थव्यवस्था तथा सामाजिक जीवन की संरचनाओं में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। सामान्यतः AI को तकनीकी प्रगति और नवाचार के रूप में देखा जाता है, किन्तु उसका प्रभाव इससे कहीं अधिक व्यापक है। AI के विकास ने यह प्रश्न भी सामने रखा है कि भविष्य की ज्ञान-व्यवस्था का निर्माण किन भाषाओं, किन सांस्कृतिक अनुभवों और किन ज्ञान-परम्पराओं के आधार पर होगा। इस संदर्भ में डिजिटल अवसंरचनाओं, डेटा-संसाधनों और एल्गोरिद्मिक प्रणालियों का बढ़ता केंद्रीकरण केवल तकनीकी असमानता का विषय नहीं रह जाता, बल्कि ज्ञान, भाषा और सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व की असमानताओं से भी जुड़ जाता है (कूड्री एवं मेजियास, 2019; ज़ुबॉफ़, 2019; मिग्नोलो, 2011)। समकालीन विमर्श में इस स्थिति को ***डिजिटल उपनिवेशवाद*** *तथा* ***ज्ञान-औपनिवेशिकता*** *जैसी अवधारणाओं के माध्यम से समझा गया है। इन अवधारणाओं का मूल संकेत यह है कि यदि ज्ञान के सृजन, वितरण और प्रमाणीकरण की प्रक्रियाएँ सीमित वैश्विक संरचनाओं द्वारा नियंत्रित हों, तो तकनीकी प्रगति के साथ-साथ बौद्धिक निर्भरता भी गहरी हो सकती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के संदर्भ में यह चुनौती विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि AI प्रणालियाँ केवल उपलब्ध ज्ञान का उपयोग नहीं करतीं, बल्कि वे ज्ञान की दृश्यता, प्राथमिकता और वैधता को भी प्रभावित करती हैं (फ्लोरिडी, 2014; बेंडर इत्यादि, 2021)। प्रस्तुत अवधारणात्मक शोध-पत्र का तर्क है कि इस चुनौती का समाधान केवल तकनीकी आत्मनिर्भरता या डिजिटल अवसंरचना के विस्तार में निहित नहीं है। आवश्यकता ऐसे वैचारिक प्रतिमान की है, जो ज्ञान-सम्प्रभुता, भाषायी बहुलता, सांस्कृतिक स्वायत्तता और नैतिक AI अभिशासन को एक समन्वित दृष्टि में समझ सके। इसी उद्देश्य से यह अध्ययन* ***बौद्धिक स्वराज*** *की अवधारणा को समकालीन AI विमर्श के साथ संवाद में स्थापित करता है। के. सी. भट्टाचार्य के विचारों में स्वराज, महात्मा गांधी की स्वराज-दृष्टि, धर्मपाल के भारतीय शिक्षा के अभिलेखीय पुनर्पाठ तथा आशीष नन्दी द्वारा प्रतिपादित मानसिक उपनिवेशवाद के आलोक में यह प्रतिपादित किया गया है कि AI के युग में भारत के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती केवल तकनीकी क्षमता का*

विकास नहीं, बल्कि ज्ञान पर आत्मनिर्णय (Knowledge Self-Determination) की क्षमता का निर्माण भी है (भट्टाचार्य, 1931/2011; गांधी, 1909/2019; धर्मपाल, 1983; नन्दी, 1983)। अध्ययन का निष्कर्ष है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता का भविष्य केवल अधिक सक्षम एल्गोरिद्म विकसित करने से सुरक्षित नहीं होगा। वह तभी अधिक न्यायपूर्ण, समावेशी और मानवीय बन सकेगा, जब विविध भाषाओं, ज्ञान-परम्पराओं और सांस्कृतिक अनुभवों को AI के ज्ञान-आधार में समान सम्मान प्राप्त होगा। भारतीय परिप्रेक्ष्य में बौद्धिक स्वराज इसी दिशा में एक वैकल्पिक ज्ञानमीमांसात्मक प्रतिमान प्रस्तुत करता है।

प्रमुख शब्द: *कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल उपनिवेशवाद, ज्ञान-औपनिवेशिकता, बौद्धिक स्वराज, ज्ञान-सम्प्रभुता, भारतीय ज्ञान-परम्परा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020।*

प्रस्तावना:

इक्कीसवीं शताब्दी में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence—AI) का विकास मानव सभ्यता के इतिहास में केवल एक तकनीकी उपलब्धि नहीं, बल्कि ज्ञान-व्यवस्था के पुनर्संरचना का संकेतक भी है। आज AI शिक्षा, स्वास्थ्य, न्याय, शासन, उद्योग, अनुसंधान तथा संचार के विविध क्षेत्रों में निर्णय-निर्माण, सूचना-प्रसंस्करण और ज्ञान-सृजन की प्रक्रियाओं को प्रभावित कर रही है (फ्लोरिडी, 2014; होम्स, बायलिक एवं फेडरमेयर, 2019)। इसके परिणामस्वरूप AI पर होने वाला विमर्श अब केवल तकनीकी दक्षता, उत्पादकता अथवा नवाचार तक सीमित नहीं रह गया है। इसके साथ ज्ञान की प्रकृति, उसकी वैधता, उसके स्रोत तथा उसके सामाजिक वितरण से जुड़े प्रश्न भी पहले की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण हो उठे हैं।

समकालीन डिजिटल समाज में ज्ञान का निर्माण और उसका प्रसार तेजी से डिजिटल मंचों, बड़े भाषा मॉडलों, खोज-एल्गोरिद्मों तथा AI-आधारित प्रणालियों के माध्यम से होने लगा है। ऐसी स्थिति में यह प्रश्न स्वाभाविक है कि भविष्य की ज्ञान-व्यवस्था किन भाषाओं, किन सांस्कृतिक अनुभवों और किन बौद्धिक परम्पराओं पर आधारित होगी। यदि AI प्रणालियों का प्रशिक्षण सीमित भाषायी संसाधनों, कुछ विशिष्ट सांस्कृतिक संदर्भों अथवा वैश्विक प्रौद्योगिकी निगमों द्वारा नियंत्रित डेटा-संग्रहों पर आधारित होगा, तो ज्ञान की असमानताएँ डिजिटल माध्यमों से और अधिक गहरी हो सकती हैं (कूड्री एवं मेजियास, 2019; ज़ुबॉफ़, 2019)। इसलिए AI के युग में प्रश्न केवल तकनीकी श्रेष्ठता का नहीं, बल्कि ज्ञान पर नियंत्रण, उसके प्रतिनिधित्व और उसकी वैधता का भी है। इसी संदर्भ में **डिजिटल उपनिवेशवाद (Digital**

Colonialism) और **ज्ञान-औपनिवेशिकता (Epistemic Coloniality)** जैसी अवधारणाएँ विशेष महत्त्व ग्रहण करती हैं। डिजिटल उपनिवेशवाद यह संकेत करता है कि डिजिटल अवसंरचनाओं, डेटा-संसाधनों और एल्गोरिद्मिक प्रणालियों का केंद्रीकरण नई प्रकार की निर्भरता उत्पन्न कर सकता है; वहीं ज्ञान-औपनिवेशिकता इस ओर ध्यान आकर्षित करती है कि ज्ञान का प्रभुत्व केवल राजनीतिक या आर्थिक शक्ति से नहीं, बल्कि उन बौद्धिक मानकों से भी निर्मित होता है जिनके आधार पर किसी ज्ञान को वैध और किसी अन्य ज्ञान को गौण माना जाता है (मिग्नोलो, 2011; फूको, 1980)। इस प्रकार AI का विमर्श तकनीकी विकास और ज्ञान-सत्ता (Knowledge-Power) के प्रश्नों को एक-दूसरे से अविच्छिन्न रूप से जोड़ देता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में यह विमर्श और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। भारत विश्व की सबसे समृद्ध बहुभाषिक और बहुल ज्ञान-परम्पराओं में से एक है। वैदिक, बौद्ध, जैन, लोक तथा अन्य अनेक ज्ञान-परम्पराओं ने भारतीय बौद्धिक जीवन को निरन्तर समृद्ध किया है। इसके बावजूद वैश्विक डिजिटल पारिस्थितिकी में इन परम्पराओं का प्रतिनिधित्व अभी भी सीमित है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 ने भी भारतीय ज्ञान-परम्परा, मातृभाषा, बहुभाषिकता तथा भारत-केंद्रित ज्ञान-दृष्टि के पुनर्स्थापन की आवश्यकता पर विशेष बल दिया है (भारत सरकार, 2020)। ऐसे में AI का प्रश्न भारत के लिए केवल तकनीकी प्रतिस्पर्धा का प्रश्न नहीं, बल्कि ज्ञान-सम्प्रभुता, भाषायी न्याय और बौद्धिक आत्मनिर्णय का भी प्रश्न बन जाता है।

पिछले कुछ वर्षों में डिजिटल उपनिवेशवाद, डेटा-औपनिवेशिकता, एल्गोरिद्मिक शासन और AI की नैतिकता पर पर्याप्त अकादमिक साहित्य उपलब्ध हुआ है (फ्लोरिडी, 2014; कूड्री एवं मेजियास, 2019; बेंडर इत्यादि, 2021; यूनेस्को, 2021)। दूसरी ओर भारतीय बौद्धिक परम्परा में के. सी. भट्टाचार्य का *विचारों में स्वराज*, महात्मा गांधी का *हिन्द स्वराज*, धर्मपाल द्वारा भारतीय शिक्षा का अभिलेखीय पुनर्पाठ तथा आशीष नन्दी द्वारा प्रतिपादित मानसिक उपनिवेशवाद ज्ञान की स्वाधीनता के प्रश्न को भिन्न ऐतिहासिक और दार्शनिक धरातल पर प्रस्तुत करते हैं। तथापि इन दोनों विमर्शों—समकालीन AI और भारतीय बौद्धिक स्वराज—के मध्य व्यवस्थित संवाद अपेक्षाकृत कम दिखाई देता है।

प्रस्तुत अवधारणात्मक शोध-पत्र इसी बौद्धिक रिक्ति (Intellectual Gap) को संबोधित करने का प्रयास करता है। इस अध्ययन का केंद्रीय तर्क है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में भारत के समक्ष वास्तविक चुनौती केवल तकनीकी आत्मनिर्भरता प्राप्त करना नहीं है। उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है ऐसी ज्ञान-व्यवस्था का निर्माण, जिसमें भारतीय भाषाएँ, भारतीय ज्ञान-परम्परा, सांस्कृतिक बहुलता तथा स्वतंत्र बौद्धिक चिंतन AI के विकास और उपयोग के अभिन्न अंग बन

सकें। इसी दृष्टि से यह अध्ययन बौद्धिक स्वराज को AI के युग के लिए एक भारतीय ज्ञानमीमांसात्मक प्रतिमान के रूप में पुनर्पाठित करता है।

डिजिटल उपनिवेशवाद : औपनिवेशिकता का नया चरण

उपनिवेशवाद की पारम्परिक अवधारणा सामान्यतः राजनीतिक प्रभुत्व, आर्थिक शोषण तथा भौगोलिक नियंत्रण से जुड़ी रही है। किन्तु उत्तर-औपनिवेशिक अध्ययनों ने यह स्पष्ट किया है कि औपनिवेशिक परियोजना का सबसे स्थायी प्रभाव ज्ञान, भाषा और सांस्कृतिक चेतना पर पड़ा। औपनिवेशिक सत्ता ने केवल भू-भागों पर अधिकार स्थापित नहीं किया; उसने यह भी निर्धारित किया कि कौन-सा ज्ञान वैध माना जाएगा, किस भाषा को आधुनिकता का माध्यम स्वीकार किया जाएगा और किन ज्ञान-परम्पराओं को प्रगति के प्रतिकूल समझा जाएगा (सईद, 1978/2003; फैनन, 1961/2004; फूको, 1980)। इस अर्थ में औपनिवेशिकता मूलतः ज्ञान-सत्ता (Knowledge-Power) की भी एक परियोजना थी। डिजिटल युग में सत्ता की संरचनाएँ बदली हैं, परन्तु ज्ञान पर नियंत्रण का प्रश्न समाप्त नहीं हुआ। इसके विपरीत, डेटा, एल्गोरिद्मिक प्रणालियाँ, क्लाउड अवसंरचनाएँ और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के मॉडल नए रणनीतिक संसाधन बनकर उभरे हैं। इन्हीं परिवर्तनों की पृष्ठभूमि में **डिजिटल उपनिवेशवाद (Digital Colonialism)** की अवधारणा विकसित हुई। इसका आशय प्रत्यक्ष राजनीतिक शासन से नहीं, बल्कि ऐसी वैश्विक डिजिटल व्यवस्था से है जिसमें सूचना, डेटा, डिजिटल अवसंरचना और AI विकास की दिशा कुछ सीमित प्रौद्योगिकी निगमों तथा तकनीकी महाशक्तियों के नियंत्रण में केन्द्रित होती चली जाती है (कूड्री एवं मेजियास, 2019)। डिजिटल उपनिवेशवाद की विशिष्टता यह है कि इसमें मानवीय अनुभव स्वयं एक संसाधन में रूपान्तरित हो जाता है। आज व्यक्तियों की गतिविधियाँ, सामाजिक व्यवहार, अधिगम, संचार और उपभोग की प्रवृत्तियाँ निरन्तर डिजिटल डेटा में परिवर्तित हो रही हैं। यह डेटा केवल तकनीकी सुविधा का माध्यम नहीं रहता; वही आर्थिक मूल्य, बाज़ार-व्यवहार, एल्गोरिद्मिक निर्णय और AI प्रशिक्षण का आधार बनता है (ज़ुबॉफ़, 2019)। इस दृष्टि से डेटा डिजिटल अर्थव्यवस्था का वही स्थान ग्रहण करता दिखाई देता है, जो औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था में प्राकृतिक संसाधनों का था। कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने इस प्रक्रिया को अभूतपूर्व गति प्रदान की है। आधुनिक AI प्रणालियों की गुणवत्ता उनके प्रशिक्षण-डेटा, कम्प्यूटेशनल संसाधनों और एल्गोरिद्मिक संरचना पर निर्भर करती है। फलतः जिन संस्थाओं के पास विशाल डेटा-संग्रह, उन्नत कम्प्यूटिंग क्षमता और तकनीकी पूँजी उपलब्ध है, वे AI के विकास, उसके मानकों और उसके उपयोग की दिशा को भी प्रभावित करती हैं (फ्लोरिडी, 2014)। यहाँ विचारणीय प्रश्न यह नहीं है कि AI कितनी सक्षम है; अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि उसका ज्ञान किन स्रोतों से निर्मित हो रहा है और उसकी सीमाएँ कौन निर्धारित कर रहा है।

शिक्षा के क्षेत्र में यह चुनौती और स्पष्ट दिखाई देती है। AI-संचालित अधिगम प्रणालियाँ, जनरेटिव AI, अनुकूलित अधिगम, स्वचालित मूल्यांकन तथा डिजिटल शैक्षिक मंच शिक्षण-अधिगम की प्रकृति को पुनर्परिभाषित कर रहे हैं (होम्स, बायलिक एवं फेडरमेयर, 2019)। निस्संदेह इनसे शिक्षा की पहुँच और दक्षता में वृद्धि की सम्भावनाएँ उत्पन्न होती हैं; किन्तु यदि इन प्रणालियों का ज्ञान-आधार भाषायी और सांस्कृतिक दृष्टि से सीमित होगा, तो वे ज्ञान-असमानताओं को भी पुनरुत्पादित कर सकती हैं। दक्षता और ज्ञान-न्याय (Knowledge Justice) सदैव समानार्थी नहीं होते; इसलिए AI की शैक्षिक उपयोगिता का मूल्यांकन उसके ज्ञान-आधार की समावेशिता के आधार पर भी किया जाना चाहिए।

यहीं डिजिटल उपनिवेशवाद का विमर्श तकनीकी प्रश्न से आगे बढ़कर ज्ञान के प्रश्न में रूपान्तरित हो जाता है। वस्तुतः चुनौती केवल डिजिटल अवसंरचना पर निर्भरता की नहीं, बल्कि उन ज्ञान-संरचनाओं की है जिनके आधार पर AI भविष्य के ज्ञान, शिक्षा और सामाजिक निर्णयों को प्रभावित करेगी। यही बिन्दु हमें ज्ञान-औपनिवेशिकता की अवधारणा की ओर ले जाता है, जहाँ विमर्श का केन्द्र डेटा नहीं, बल्कि ज्ञान की वैधता, प्रतिनिधित्व और बौद्धिक स्वायत्तता बन जाता है।

ज्ञान-औपनिवेशिकता, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और ज्ञान-सम्प्रभुता का संकट

यदि डिजिटल उपनिवेशवाद का संबंध डिजिटल अवसंरचनाओं और डेटा पर नियंत्रण से है, तो उसका अधिक गहरा आयाम ज्ञान के नियंत्रण से जुड़ा है। यही वह स्तर है जहाँ ज्ञान-औपनिवेशिकता (Epistemic Coloniality) का प्रश्न सामने आता है। ज्ञान-औपनिवेशिकता का आशय किसी एक ज्ञान-परम्परा या वैचारिक प्रतिमान का प्रभुत्व मात्र नहीं है; यह उन प्रक्रियाओं की ओर संकेत करती है जिनके माध्यम से कुछ ज्ञान-रूपों को सार्वभौमिक और अन्य को स्थानीय, पारम्परिक अथवा कम विश्वसनीय मान लिया जाता है (मिग्नोलो, 2011)। इस प्रकार ज्ञान की वैधता स्वयं सत्ता-संबंधों से प्रभावित होने लगती है (फूको, 1980)।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विकास ने इस विमर्श को नई प्रासंगिकता प्रदान की है। AI प्रणालियाँ विशाल डिजिटल कॉर्पस, बड़े भाषा मॉडल, सांख्यिकीय प्रतिरूपों तथा एल्गोरिद्मिक अधिगम पर आधारित होती हैं। इनका प्रशिक्षण मुख्यतः उन्हीं भाषाओं और ज्ञान-संसाधनों पर निर्भर करता है जिनकी डिजिटल उपस्थिति पहले से अधिक है। परिणामस्वरूप AI अनजाने में उन्हीं ज्ञान-संरचनाओं को अधिक दृश्य, अधिक उद्धृत और अधिक प्रभावशाली बना सकती है, जिनका प्रतिनिधित्व उसके प्रशिक्षण-डेटा में पर्याप्त है (बेंडर इत्यादि, 2021)। यहाँ समस्या तकनीकी पक्षपात (bias) भर नहीं है; प्रश्न यह भी है कि भविष्य का ज्ञान किन स्रोतों से निर्मित होगा और किन स्रोतों की उपेक्षा की जाएगी।

भारतीय संदर्भ में यह चुनौती विशेष रूप से विचारणीय है। भारत की ज्ञान-परम्परा बहुभाषिक, बहुदार्शनिक और बहुलतावादी रही है। संस्कृत, पालि, प्राकृत, तमिल तथा अन्य भारतीय भाषाओं में विकसित ज्ञान-साहित्य केवल ऐतिहासिक धरोहर नहीं, बल्कि आज भी दार्शनिक, नैतिक और शैक्षिक विमर्श के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। इसके विपरीत समकालीन AI का ज्ञान-आधार मुख्यतः अंग्रेज़ी और कुछ अन्य वैश्विक भाषाओं पर केन्द्रित है। यदि इस असंतुलन को दूर करने के गंभीर प्रयास नहीं किए गए, तो AI की प्रगति के साथ-साथ ज्ञान का भाषायी और सांस्कृतिक संकेंद्रण भी बढ़ सकता है।

शिक्षा के क्षेत्र में यह स्थिति और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। AI-संचालित शिक्षण-सहायक, डिजिटल सामग्री, स्वचालित मूल्यांकन तथा जनरेटिव AI आधारित अधिगम-संसाधन विद्यार्थियों की ज्ञान-दृष्टि को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने लगे हैं (होम्स, बायलिक एवं फेडरमेयर, 2019)। यदि इन प्रणालियों में भारतीय भाषाओं, भारतीय दार्शनिक परम्पराओं, स्थानीय इतिहास और स्वदेशी ज्ञान-प्रणालियों का प्रतिनिधित्व सीमित रहेगा, तो शिक्षा का डिजिटलीकरण अनजाने में ज्ञान की विविधता को संकुचित भी कर सकता है। यह स्थिति इसलिए भी गंभीर है कि AI केवल सूचना उपलब्ध नहीं कराती; वह धीरे-धीरे यह भी निर्धारित करने लगती है कि कौन-सी सूचना अधिक विश्वसनीय, अधिक प्रासंगिक और अधिक उपयोगी मानी जाएगी।

यहीं ज्ञान-सम्प्रभुता (Knowledge Sovereignty) की अवधारणा विशेष महत्त्व ग्रहण करती है। इसका आशय किसी एक ज्ञान-परम्परा के वर्चस्व से नहीं, बल्कि प्रत्येक समाज की उस क्षमता से है जिसके आधार पर वह अपनी भाषाओं, सांस्कृतिक अनुभवों और बौद्धिक परम्पराओं के अनुरूप ज्ञान का सृजन, संरक्षण और पुनर्व्याख्या कर सके। ज्ञान-सम्प्रभुता वैश्विक ज्ञान-संवाद का विरोध नहीं करती; बल्कि वह उसमें न्यायपूर्ण सहभागिता का आग्रह करती है। वस्तुतः किसी भी लोकतांत्रिक ज्ञान-व्यवस्था की आधारशिला यही है कि विविध ज्ञान-परम्पराओं को समान सम्मान और अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त हो (यूनेस्को, 2021)।

यहीं एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उभरता है। यदि AI के युग की चुनौती ज्ञान पर बढ़ते नियंत्रण की है, तो उसका उत्तर केवल नई तकनीकों का विकास नहीं हो सकता। आवश्यकता उस बौद्धिक दृष्टि की है जो ज्ञान की स्वायत्तता, वैचारिक स्वतंत्रता और मौलिक चिंतन को केंद्र में रख सके। भारतीय बौद्धिक परम्परा में इस प्रश्न का सर्वाधिक सुसंगत दार्शनिक प्रतिपादन **के. सी. भट्टाचार्य** ने अपने ऐतिहासिक निबन्ध **"विचारों में स्वराज"** में किया था। इसलिए AI और ज्ञान-औपनिवेशिकता के समकालीन संकट को समझने के लिए अब उसी वैचारिक परम्परा की ओर लौटना आवश्यक प्रतीत होता है।

औपनिवेशिक ज्ञान की राजनीति और बौद्धिक स्वराज की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में ज्ञान-औपनिवेशिकता की चर्चा करते समय उसके ऐतिहासिक स्रोतों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। डिजिटल माध्यमों से निर्मित ज्ञान-सत्ता की वर्तमान संरचनाएँ औपनिवेशिक काल से पूर्णतः पृथक नहीं हैं; उन्होंने अनेक स्तरों पर उसी वैचारिक तर्क को नए साधनों के साथ आगे बढ़ाया है। इसलिए AI के संदर्भ में बौद्धिक स्वराज का प्रश्न समझने के लिए औपनिवेशिक ज्ञान की राजनीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का संक्षिप्त पुनरावलोकन आवश्यक है।

भारत में औपनिवेशिक शिक्षा-विमर्श का सर्वाधिक चर्चित दस्तावेज़ थॉमस बैबिंगटन मैकॉले का *Minute on Indian Education* (1835) है। इसे प्रायः अंग्रेज़ी शिक्षा की नीति के रूप में देखा जाता है, किन्तु उसका प्रभाव केवल माध्यम-परिवर्तन तक सीमित नहीं था। इसने ज्ञान की वैधता के मानदण्डों को भी पुनर्परिभाषित किया। भारतीय भाषाओं, पारम्परिक शिक्षा-संस्थानों और स्वदेशी ज्ञान-परम्पराओं की उपेक्षा करते हुए पश्चिमी ज्ञान को आधुनिकता का प्रमुख मानक स्थापित किया गया। परिणामस्वरूप औपनिवेशिक शिक्षा केवल प्रशासनिक आवश्यकता की पूर्ति का साधन नहीं रही; वह ज्ञान-सत्ता के पुनर्गठन की परियोजना भी बन गई (यंग, 2001; सईद, 1978/2003)। औपनिवेशिक शासन की यह विशेषता थी कि उसने राजनीतिक नियंत्रण को ज्ञान के नियंत्रण से अलग नहीं माना। शिक्षा, इतिहास-लेखन, भाषा और प्रशासनिक संरचनाओं के माध्यम से ऐसी मानसिकता विकसित की गई जिसमें पश्चिमी ज्ञान को सार्वभौमिक तथा भारतीय ज्ञान-परम्पराओं को अतीत का अवशेष समझा जाने लगा। इस प्रकार औपनिवेशिक प्रभुत्व केवल राज्य-सत्ता का विस्तार नहीं था; वह बौद्धिक मानकों के पुनर्निर्माण का भी प्रयास था। दूसरे शब्दों में, औपनिवेशिक शासन ने भारतीय समाज से केवल राजनीतिक अधिकार नहीं छीने, बल्कि उसके ज्ञान पर विश्वास को भी चुनौती दी।

यही वह ऐतिहासिक क्षण था जिसमें भारतीय चिंतकों ने बौद्धिक स्वाधीनता के प्रश्न को नई गंभीरता के साथ उठाया। उनके सामने चुनौती केवल विदेशी शासन से मुक्ति की नहीं थी, बल्कि उस मानसिक संरचना से भी थी जो अपने ज्ञान का मूल्यांकन बाहरी प्रतिमानों के आधार पर करने लगी थी। इसी संदर्भ में के. सी. भट्टाचार्य का *विचारों में स्वराज* भारतीय बौद्धिक इतिहास में एक निर्णायक हस्तक्षेप के रूप में सामने आता है। उन्होंने प्रश्न उठाया कि यदि विचार, ज्ञान और वैचारिक मानदण्ड भी उधार के हों, तो राजनीतिक स्वतंत्रता कितनी सार्थक होगी? यही प्रश्न आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में एक नए रूप में पुनः हमारे सामने उपस्थित है।

बौद्धिक स्वराज का पुनर्पाठ : कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में भारतीय दृष्टि

औपनिवेशिक ज्ञान की राजनीति की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि यह स्पष्ट करती है कि किसी भी समाज की वास्तविक शक्ति केवल उसकी राजनीतिक या आर्थिक सामर्थ्य में नहीं, बल्कि उसकी बौद्धिक स्वायत्तता में निहित होती है। इसी संदर्भ में के. सी. भट्टाचार्य का प्रसिद्ध निबन्ध *विचारों में स्वराज* भारतीय बौद्धिक इतिहास का एक मील का पत्थर है। भट्टाचार्य (1931/2011) ने यह प्रतिपादित किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अधूरी है, जब तक कोई समाज अपने विचारों, ज्ञान-मानकों और बौद्धिक निर्णयों में स्वतंत्र न हो। उनके अनुसार वास्तविक पराधीनता तब उत्पन्न होती है जब कोई समाज अपने अनुभवों की व्याख्या भी दूसरे की बौद्धिक दृष्टि से करने लगता है। भट्टाचार्य का यह प्रतिपादन आज कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में नए अर्थ ग्रहण करता है। वर्तमान AI प्रणालियाँ केवल सूचना का प्रसंस्करण नहीं करतीं; वे ज्ञान के संगठन, वर्गीकरण, अनुशंसा और वैधता को भी प्रभावित करती हैं। यदि भविष्य की AI मुख्यतः सीमित भाषायी, सांस्कृतिक और वैचारिक स्रोतों पर प्रशिक्षित होगी, तो ज्ञान की विविधता क्रमशः संकुचित होती जाएगी। ऐसी स्थिति में बौद्धिक पराधीनता का स्वरूप बदल अवश्य जाएगा, किन्तु उसका मूल प्रश्न वही रहेगा - क्या हम अपनी बौद्धिक दृष्टि से संसार को समझ रहे हैं, अथवा किसी पूर्वनिर्धारित एल्गोरिद्मिक दृष्टि से?

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि बौद्धिक स्वराज का अर्थ वैश्विक ज्ञान से विमुख होना नहीं है। भट्टाचार्य का आग्रह आत्मनिर्भर चिंतन पर था, आत्मपृथक्करण पर नहीं। इसलिए AI के संदर्भ में बौद्धिक स्वराज का अर्थ यह नहीं है कि भारत वैश्विक तकनीकी विकास से दूरी बना ले; बल्कि यह है कि भारतीय भाषाएँ, भारतीय ज्ञान-परम्पराएँ और भारतीय बौद्धिक अनुभव भी AI के ज्ञान-आधार का सक्रिय हिस्सा बनें। दूसरे शब्दों में, प्रश्न AI के उपयोग का नहीं, बल्कि AI के ज्ञान-स्रोतों की बहुलता का है।

महात्मा गांधी के *हिन्द स्वराज* में भी इसी चिंता का एक व्यापक नैतिक और शैक्षिक स्वरूप दिखाई देता है। गांधी (1909/2019) के लिए स्वराज केवल राजनीतिक सत्ता-परिवर्तन नहीं था; वह मनुष्य की आत्मनिर्भरता, नैतिक विवेक और सांस्कृतिक आत्मविश्वास का भी प्रश्न था। उनकी शिक्षा-दृष्टि का मूल उद्देश्य ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण था जो अपने समाज, अपनी भाषा और अपने श्रम से जुड़ा रहे, किन्तु विश्व के प्रति खुला भी रहे। इस दृष्टि से गांधी का स्वराज और भट्टाचार्य का *विचारों में स्वराज* परस्पर पूरक प्रतीत होते हैं - एक नैतिक आधार प्रदान करता है, दूसरा बौद्धिक आधार।

धर्मपाल ने इस विमर्श को ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर और अधिक पुष्ट किया। औपनिवेशिक अभिलेखों के विश्लेषण द्वारा उन्होंने यह दिखाया कि भारत में औपनिवेशिक शासन से पूर्व शिक्षा का एक व्यापक, विकेन्द्रीकृत और सामाजिक रूप से समर्थ तंत्र विद्यमान था (धर्मपाल, 1983)। उनके अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण संदेश यह है कि भारतीय

समाज ज्ञान-निर्माण की अपनी स्वतंत्र परम्पराओं से सम्पन्न था। AI के युग में धर्मपाल का कार्य यह स्मरण कराता है कि किसी ज्ञान-परम्परा का मूल्य केवल उसकी डिजिटल दृश्यता से निर्धारित नहीं किया जा सकता। अनेक महत्त्वपूर्ण ज्ञान-संसाधन आज भी स्थानीय भाषाओं, परम्परागत ग्रन्थों और सामुदायिक अनुभवों में निहित हैं। आशीष नन्दी (1983) ने औपनिवेशिकता के मनोवैज्ञानिक पक्ष की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए लिखा कि औपनिवेशिक शासन का सबसे स्थायी प्रभाव मनुष्य की चेतना पर पड़ता है। जब कोई समाज बाहरी मानकों को ही श्रेष्ठ मानने लगता है, तब मानसिक उपनिवेशवाद जन्म लेता है। AI के संदर्भ में यह चेतावनी अत्यन्त प्रासंगिक है। यदि हम तकनीकी उत्कृष्टता को ही ज्ञान की उत्कृष्टता मान लें, तो हम अनजाने में उसी मानसिक संरचना को पुनः स्थापित कर सकते हैं जिसकी आलोचना उत्तर-औपनिवेशिक चिंतकों ने की थी।

इसी बिन्दु पर प्रस्तुत अध्ययन **बौद्धिक स्वराज** को कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग के लिए एक भारतीय ज्ञानमीमांसात्मक प्रतिमान के रूप में पुनर्परिभाषित करता है। इस प्रतिमान के पाँच परस्पर सम्बद्ध आयाम हैं—**ज्ञान-सम्प्रभुता**, **भाषायी न्याय**, **सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व**, **उत्तरदायी डेटा-शासन** तथा **नैतिक AI शासन**। इनका उद्देश्य किसी प्रकार का तकनीकी संरक्षणवाद नहीं है; बल्कि ऐसी ज्ञान-व्यवस्था का निर्माण है जिसमें विविध ज्ञान-परम्पराएँ समान सम्मान के साथ AI के विकास में योगदान दे सकें।

यही दृष्टि राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 की उस भावना से भी मेल खाती है, जिसमें भारतीय ज्ञान-परम्परा, बहुभाषिकता, मातृभाषा-आधारित शिक्षा तथा वैश्विक दृष्टि के साथ भारत-केंद्रित ज्ञान-विकास पर बल दिया गया है (भारत सरकार, 2020)। यदि इन सिद्धान्तों को AI के विकास, डिजिटल शिक्षण-संसाधनों और भारतीय भाषाओं के ज्ञान-कॉर्पस के निर्माण से जोड़ा जाए, तो भारत केवल AI का उपभोक्ता नहीं रहेगा; वह उसके ज्ञान-आधार के निर्माण में भी सार्थक योगदान दे सकेगा। यदि इन सिद्धान्तों को AI के विकास, डिजिटल शिक्षण-संसाधनों और भारतीय भाषाओं के ज्ञान-कॉर्पस के निर्माण से जोड़ा जाए, तो भारत केवल AI का उपभोक्ता नहीं रहेगा; वह उसके ज्ञान-आधार के निर्माण में भी सार्थक योगदान दे सकेगा। इस संदर्भ में यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि प्रस्तुत अध्ययन में प्रयुक्त 'बौद्धिक स्वराज' और 'ज्ञान-सम्प्रभुता' परस्पर प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि पूरक अवधारणाएँ हैं। बौद्धिक स्वराज उस दार्शनिक आधार का प्रतिनिधित्व करता है, जो स्वतंत्र चिंतन, वैचारिक आत्मनिर्णय और ज्ञान की स्वायत्तता पर बल देता है; जबकि ज्ञान-सम्प्रभुता उसी दृष्टि की नीतिगत एवं संस्थागत अभिव्यक्ति है, जिसके माध्यम से भाषायी विविधता, ज्ञान-संसाधनों की उपलब्धता, डेटा-शासन और AI के विकास में न्यायपूर्ण सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। इस प्रकार ज्ञान-सम्प्रभुता, बौद्धिक स्वराज का व्यावहारिक विस्तार है।

नीतिगत एवं शैक्षिक निहितार्थ

यदि कृत्रिम बुद्धिमत्ता भविष्य की ज्ञान-व्यवस्था के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाने जा रही है, तो उसके विकास और उपयोग के संबंध में नीतिगत स्तर पर भी पुनर्विचार आवश्यक है। प्रस्तुत अध्ययन का तर्क है कि AI की सफलता का मूल्यांकन केवल उसकी तकनीकी दक्षता, कम्प्यूटेशनल क्षमता अथवा आर्थिक उपयोगिता के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए। समान रूप से महत्त्वपूर्ण यह भी है कि वह ज्ञान की विविधता, भाषायी न्याय, सांस्कृतिक प्रतिनिधित्व और सार्वजनिक उत्तरदायित्व को किस सीमा तक सुनिश्चित करती है। इस दृष्टि से AI का प्रश्न विज्ञान और प्रौद्योगिकी का होने के साथ-साथ शिक्षा, संस्कृति और लोकतांत्रिक नीति-निर्माण का भी प्रश्न है।

भारतीय संदर्भ में प्रथम आवश्यकता भारतीय भाषाओं के उच्च-गुणवत्ता वाले डिजिटल कॉर्पस, मुक्त शैक्षिक संसाधनों तथा विश्वसनीय ज्ञान-संग्रहों के व्यवस्थित विकास की है। AI प्रणालियों का ज्ञान-आधार जितना अधिक बहुभाषिक और बहुलतावादी होगा, उनके निर्णय और उत्तर उतने ही अधिक समावेशी बन सकेंगे। इसलिए भारतीय भाषाओं में अकादमिक सामग्री, शोध-साहित्य, पारम्परिक ग्रन्थों और समकालीन ज्ञान-संसाधनों के डिजिटलीकरण को केवल संरक्षण का कार्य नहीं, बल्कि AI के भविष्य में निवेश के रूप में देखा जाना चाहिए।

द्वितीय, भारतीय ज्ञान-परम्परा को AI-सक्षम शिक्षा से जोड़ने की आवश्यकता है। इसका अर्थ पारम्परिक ग्रन्थों को यांत्रिक रूप से पाठ्यक्रम में जोड़ देना नहीं है, बल्कि उनके दार्शनिक, नैतिक और ज्ञानमीमांसात्मक आयामों को समकालीन संदर्भों में पुनर्पाठित करना है। यदि भारतीय ज्ञान-परम्परा केवल सांस्कृतिक प्रतीक बनकर रह जाएगी, तो उसका AI-विमर्श से कोई सार्थक संवाद स्थापित नहीं होगा। इसके विपरीत, यदि उसे आलोचनात्मक, तुलनात्मक और अंतर्विषयी दृष्टि से पढ़ाया जाएगा, तो वह AI की नैतिकता, ज्ञान-न्याय और मानव-केंद्रित प्रौद्योगिकी के विमर्श को समृद्ध कर सकती है।

तृतीय, उच्च शिक्षा संस्थानों में AI साक्षरता (AI Literacy) को केवल तकनीकी प्रशिक्षण तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए। विद्यार्थियों और शोधार्थियों को एल्गोरिद्मिक पूर्वाग्रह, डेटा-नैतिकता, ज्ञान-औपनिवेशिकता, डिजिटल नागरिकता तथा उत्तरदायी AI के प्रश्नों से भी परिचित कराया जाना आवश्यक है। इससे AI का उपयोग अधिक विवेकपूर्ण, उत्तरदायी और आलोचनात्मक दृष्टि के साथ किया जा सकेगा।

अंततः, भारत के लिए AI नीति का लक्ष्य केवल वैश्विक प्रतिस्पर्धा में अग्रणी बनना नहीं होना चाहिए। उससे अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि भारत ऐसी AI पारिस्थितिकी का निर्माण करे, जो ज्ञान की बहुलता, भाषायी विविधता, सांस्कृतिक गरिमा और लोकतांत्रिक मूल्यों को समान रूप से प्रतिष्ठित करे। यही दिशा बौद्धिक स्वराज की समकालीन अभिव्यक्ति भी है और राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 की मूल भावना के अनुरूप भी।

निष्कर्ष

कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने ज्ञान-सृजन, शिक्षा, अनुसंधान और सामाजिक निर्णय-निर्माण की प्रक्रियाओं को अभूतपूर्व रूप से प्रभावित किया है। इसके साथ ही यह भी स्पष्ट होता जा रहा है कि AI का प्रश्न केवल तकनीकी दक्षता, कम्प्यूटेशनल क्षमता अथवा आर्थिक प्रतिस्पर्धा का नहीं है। यह ज्ञान के सृजन, उसकी वैधता, उसके प्रतिनिधित्व और उसके लोकतांत्रिक वितरण से भी गहराई से जुड़ा हुआ है। इसलिए डिजिटल उपनिवेशवाद और ज्ञान-औपनिवेशिकता का समकालीन विमर्श मूलतः उस बौद्धिक चुनौती की ओर संकेत करता है, जिसमें भविष्य की ज्ञान-व्यवस्था के स्वरूप का निर्धारण सीमित डिजिटल संरचनाओं और एल्गोरिद्मिक तंत्रों द्वारा किया जा सकता है।

प्रस्तुत अवधारणात्मक अध्ययन का केंद्रीय प्रतिपादन यह है कि इस चुनौती का उत्तर केवल तकनीकी आत्मनिर्भरता या डिजिटल अवसंरचना के विस्तार में निहित नहीं है। यदि ज्ञान के स्रोत, भाषाएँ, सांस्कृतिक अनुभव और बौद्धिक परम्पराएँ AI के ज्ञान-आधार में समुचित स्थान नहीं प्राप्त करतीं, तो तकनीकी प्रगति के साथ-साथ ज्ञान की असमानताएँ भी सुदृढ़ हो सकती हैं। इसीलिए AI के युग में भारत के समक्ष सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह नहीं है कि वह कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपभोक्ता बनेगा या उत्पादक; वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या वह अपनी भाषाओं, अपनी ज्ञान-परम्पराओं और अपनी बौद्धिक दृष्टि के साथ वैश्विक ज्ञान-व्यवस्था के निर्माण में सक्रिय भागीदारी निभा सकेगा। इसी संदर्भ में यह अध्ययन प्रतिपादित करता है कि **बौद्धिक स्वराज** को समकालीन AI-विमर्श में पुनर्पाठित करने की आवश्यकता है। के. सी. भट्टाचार्य के *विचारों में स्वराज*, महात्मा गांधी की स्वराज-दृष्टि, धर्मपाल के अभिलेखीय पुनर्पाठ तथा आशीष नन्दी के मानसिक उपनिवेशवाद से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी समाज की वास्तविक शक्ति उसकी बौद्धिक स्वायत्तता, आलोचनात्मक विवेक और स्वतंत्र ज्ञान-सृजन की क्षमता में निहित होती है। AI के युग में यही विचार नई प्रासंगिकता प्राप्त करता है, क्योंकि भविष्य का ज्ञान बढ़ते हुए एल्गोरिद्मिक माध्यमों से निर्मित, संगठित और प्रसारित होगा।

प्रस्तुत अध्ययन के अनुसार **बौद्धिक स्वराज** और **ज्ञान-सम्प्रभुता** को परस्पर पूरक अवधारणाओं के रूप में समझा जाना चाहिए। बौद्धिक स्वराज स्वतंत्र चिंतन, वैचारिक आत्मनिर्णय और ज्ञान की स्वायत्तता का दार्शनिक आधार प्रदान करता है; जबकि ज्ञान-सम्प्रभुता उसी दृष्टि की नीतिगत एवं संस्थागत अभिव्यक्ति है, जिसके माध्यम से भाषायी विविधता, भारतीय ज्ञान-परम्परा, डेटा-शासन, मुक्त ज्ञान-संसाधनों तथा उत्तरदायी AI के विकास को व्यवहारिक रूप दिया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, ज्ञान-सम्प्रभुता बौद्धिक स्वराज का समकालीन सामाजिक और नीतिगत विस्तार है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020 ने भारतीय ज्ञान-परम्परा, बहुभाषिकता, समावेशी शिक्षा तथा भारत-केंद्रित ज्ञान-दृष्टि पर जो बल दिया है, वह AI के युग में और अधिक प्रासंगिक हो उठता है। यदि भारतीय भाषाओं में उच्च-गुणवत्ता वाले डिजिटल कॉर्पस, विश्वसनीय ज्ञान-संग्रह, मुक्त शैक्षिक संसाधन तथा नैतिक AI ढाँचे विकसित किए जाते हैं, तो भारत केवल वैश्विक तकनीकी प्रतिस्पर्धा में भागीदारी ही नहीं करेगा, बल्कि अधिक न्यायपूर्ण, बहुलतावादी और मानवीय वैश्विक ज्ञान-व्यवस्था के निर्माण में भी सार्थक योगदान दे सकेगा।

अंततः, यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता का भविष्य केवल अधिक सक्षम एल्गोरिद्म विकसित करने पर निर्भर नहीं करेगा; उसकी दिशा इस बात से भी निर्धारित होगी कि वह विविध ज्ञान-परम्पराओं, भाषाओं और सभ्यतागत अनुभवों के साथ कितना न्याय कर पाती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में बौद्धिक स्वराज इसी व्यापक मानवीय और लोकतांत्रिक दृष्टि का दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है। इस अर्थ में बौद्धिक स्वराज अतीत की ओर लौटने का आग्रह नहीं, बल्कि भविष्य की ऐसी ज्ञान-व्यवस्था का प्रस्ताव है जिसमें तकनीकी प्रगति और बौद्धिक स्वतंत्रता परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे की पूरक हों।

संदर्भ

1. ओ' नील, सी. (2016). *वेपन्स ऑफ मैथ डिस्ट्रक्शन: हाउ बिग डेटा इन्क्रीज़ेज़ इनइक्वैलिटी एंड थ्रेटन्स डेमोक्रेसी*. क्राउन.
2. कूड्री, एन., एवं मेजियास, यू. ए. (2019). *दि कॉस्ट्स ऑफ कनेक्शन: हाउ डेटा इज़ कॉलोनाइजिंग ह्यूमन लाइफ़ एंड एप्रोप्रियेटिंग इट फ़ॉर कैपिटलिज़्म*. स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
3. कॉटन, डी. आर. ई., कॉटन, पी. ए., एवं शिपवे, जे. आर. (2023). *चैटिंग एंड चीटिंग: एन्श्योरिंग एकेडमिक इंटीग्रिटी इन द एरा ऑफ चैटजीपीटी*. *इनोवेशन्स इन एजुकेशन एंड टीचिंग इंटरनेशनल, 61*(2), 228–239. https://doi.org/10.1080/14703297.2023.2190148
4. क्रॉम्पटन, एच., एवं बर्क, डी. (2023). *आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस इन हायर एजुकेशन: द स्टेट ऑफ द फ़ील्ड*. *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी इन हायर एजुकेशन, 20*(1), 22. https://doi.org/10.1186/s41239-023-00392-8
5. गांधी, एम. के. (2019). *हिन्द स्वराज*. नवजीवन पब्लिशिंग हाउस. (मूल कृति 1909)

6. चेन, एल., चेन, पी., एवं लिन, ज़ेड. (2020). *आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस इन एजुकेशन: ए रिव्यू. आईईईई एक्सेस, 8*, 75264–75278. https://doi.org/10.1109/ACCESS.2020.2988510
7. ज़ावाकी-रिख्टर, ओ., मारिन, वी. आई., बॉन्ड, एम., एवं गॉवर्नर, एफ. (2019). *सिस्टेमैटिक रिव्यू ऑफ रिसर्च ऑन आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस एप्लिकेशन्स इन हायर एजुकेशन—वेयर आर द एजुकेटर्स? इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलॉजी इन हायर एजुकेशन, 16*, 39. https://doi.org/10.1186/s41239-019-0171-0
8. ज़ुबॉफ़, एस. (2019). *दि एज ऑफ सर्विलांस कैपिटलिज़्म: द फाइट फ़ॉर अ ह्यूमन फ़्यूचर एट द न्यू फ्रंटियर ऑफ पावर*. पब्लिकअफ़ेयर्स.
9. धर्मपाल. (1983). *दि ब्यूटीफुल ट्री: इंडिजिनस इंडियन एजुकेशन इन द एटीन्थ सेंचुरी*. बिब्लिया इमप्रेक्स.
10. नन्दी, आ. (1983). *दि इंटिमेट एनिमी: लॉस एंड रिकवरी ऑफ सेल्फ अंडर कॉलोनियलिज़्म*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
11. न्गुगी वा थ्योंगो. (1986). *डिकॉलोनाइजिंग द माइंड: द पॉलिटिक्स ऑफ लैंग्वेज इन अफ़्रीकन लिटरेचर*. जेम्स करी.
12. फूको, एम. (1980). *पावर/नॉलेज: सेलेक्टेड इंटरव्यूज़ एंड अदर राइटिंग्स, 1972–1977*. पैंथियन बुक्स.
13. फैनन, एफ. (2004). *दि रेच्ड ऑफ द अर्थ* (आर. फिलकॉक्स, अनुवाद; मूल कृति 1961). ग्रोव प्रेस.
14. फ्रिकर, एम. (2007). *एपिस्टेमिक इनजस्टिस: पावर एंड द एथिक्स ऑफ नॉइंग*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
15. फ्लोरिडी, एल. (2014). *दि फोर्थ रिवोल्यूशन: हाउ द इन्फोस्फीयर इज़ रीशेपिंग ह्यूमन रियलिटी*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
16. बेंडर, ई. एम., गेब्रु, टी., मैकमिलन-मेजर, ए., एवं शिमटचेल, एस. (2021). *ऑन द डेंजर्स ऑफ स्टोकास्टिक पैरट्स: कैन लैंग्वेज मॉडल्स बी टू बिग?* एफएसीसीटी '21: प्रोसीडिंग्स ऑफ द 2021 एसीएम कॉन्फ्रेंस ऑन फ़ेयरनेस, अकाउंटेबिलिटी एंड ट्रांसपेरेंसी, 610–623. https://doi.org/10.1145/3442188.3445922
17. भट्टाचार्य, के. सी. (2011). *स्वराज इन आइडियाज़*. इन *दि एसेन्शियल राइटिंग्स ऑफ के. सी. भट्टाचार्य* (मूल निबन्ध 1931). ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
18. भारत सरकार. (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020*. शिक्षा मंत्रालय.

19. मिग्नोलो, डब्ल्यू. डी. (2011). *दि डार्कर साइड ऑफ वेस्टर्न मॉडर्निटी: ग्लोबल फ्यूचर्स, डिकोलोनियल ऑप्शन्स*. ड्यूक यूनिवर्सिटी प्रेस.

20. यंग, आर. जे. सी. (2001). *पोस्टकॉलोनियलिज़्म: एन हिस्टॉरिकल इंट्रोडक्शन*. ब्लैकवेल.

21. यूनेस्को. (2021). *एआई एंड एजुकेशन: गाइडेन्स फ़ॉर पॉलिसी-मेकर्स*. पेरिस: यूनेस्को.

22. यूनेस्को. (2021). *रिकमेंडेशन ऑन द एथिक्स ऑफ आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस*. यूनेस्को.

23. सईद, ई. डब्ल्यू. (2003). *ओरिएंटलिज़्म*. पेंगुइन बुक्स. (मूल कृति 1978)

24. सैंटोस, बी. डी. एस. (2014). *एपिस्टेमोलॉजीज़ ऑफ द साउथ: जस्टिस अगेंस्ट एपिस्टेमिसाइड*. पैराडाइम पब्लिशर्स.

25. होम्स, डब्ल्यू., बायलिक, एम., एवं फेडरमेयर, सी. (2019). *आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इन एजुकेशन: प्रॉमिसेज एंड इम्प्लिकेशन्स फ़ॉर टीचिंग एंड लर्निंग*. सेंटर फ़ॉर करिकुलम रीडिज़ाइन.

26. होम्स, डब्ल्यू., बायलिक, एम., एवं फेडेल, सी. (2019). *आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस इन एजुकेशन: प्रॉमिसेज़ एंड इम्प्लिकेशन्स फ़ॉर टीचिंग एंड लर्निंग*. बोस्टन, एम.ए.: सेंटर फ़ॉर करिकुलम रीडिज़ाइन.